प्रवचन नं. १०६ गाथा ३७ दिनाङ्क १२-१०-१९७८ गुरुवार
आसोज शुक्ल ११, वीर निर्वाण संवत् २५०४

समयसार, ३७ गाथा। **टीका - अपने निजरस से जो प्रगट हुई है,....** क्या कहते हैं ? कि यह आत्मा जो चैतन्यशक्ति, चैतन्यलोक, उसमें से अपनी योग्यता से-निजरस से सम्यग्ज्ञान की पर्याय प्रगट हुई। ३७ गाथा है न अन्तिम ! **अपने निजरस से जो प्रगट हुई है,....** कौन ? **प्रचण्ड चिन्मात्रशक्ति....** आहाहा ! भगवान आत्मा चैतन्यज्योति के आश्रय से पर्याय में-अवस्था में चैतन्यशक्ति की व्यक्तता प्रगट हुई, उसे चैतन्यशक्ति कहा गया है। चैतन्यस्वरूप भगवान में से अपने रस से-अपनी शक्ति से, अपने अवलम्बन से, अपने से सम्यग्ज्ञान ज्योति प्रगट हुई। **जिसका विस्तार अनिवार है....** जो ज्ञान की पर्याय प्रगट हुई, उसका विस्तार अनिवार है, विशाल है, वह ज्ञान की दशा विशाल है। आहाहा ! **तथा समस्त पदार्थों को ग्रसित करने का जिसका स्वभाव है...** आहाहा ! भगवान आत्मा अपना ज्ञान, ज्ञायकस्वरूप की दृष्टि करके जो पर्याय में सम्यग्ज्ञान की धारा प्रगट हुई, उसकी शक्ति कितनी है ? **समस्त पदार्थों को ग्रसित करने का जिसका स्वभाव है...** आहाहा ! अपने अलावा सर्व पदार्थ — अनन्त सिद्ध, अनन्त निगोद के जीव, अनन्त परमाणु, असंख्य कालाणु, (एक)-एक धर्म, अधर्म और आकाश, इन सब पदार्थों को जानने की-ग्रसित करने की शक्ति है, ग्रहण करने की शक्ति है। उसका ज्ञान ग्रहण करने की शक्ति है। आहाहा ! ऐसी बातें हैं। **समस्त पदार्थों को ग्रसित करने का...** ग्रसित-ग्रास कर जाता है। अन्दर मानो ग्रास... आहाहा ! ग्रास !

कहो, (जीव अधिकार में) अन्तिम गाथा है ३७-३८। जो भावेन्द्रिय है, एक-एक विषय को जानती है, वह तो खण्ड-खण्ड ज्ञान है, वह तो अज्ञान है, वह वास्तविक ज्ञान नहीं है। आहाहा ! भगवान आत्मा चैतन्यस्वभाव के प्रवाह का धोध, ध्रुव सागर के आश्रय से - दृष्टि से उसको अपना जाना तो अपनी पर्याय में ज्ञान की धारा शुद्धपर्याय इतनी प्रगट हुई कि सारे लोकालोक को ग्रसित-ग्रास कर जाये - ऐसी शक्ति प्रगट हुई है। अरे ! ऐसी बातें हैं। सर्व ज्ञेय को, ज्ञान की प्रगट पर्याय - सम्यग्ज्ञान सबको ग्रासीभूत कर जाये, ग्रसित कर जाये, ऐसी शक्ति है। आहाहा !

ऐसी प्रचण्ड चिन्मात्रशक्ति.... ऐसी प्रचण्ड उग्र, चिन्मात्रशक्ति पर्याय में, हों! आहाहा! राग नहीं। उस चैतन्यमात्र शक्ति की प्रगटता... आहाहा! सूक्ष्म बात है, प्रभु! जीव -आत्मा उसने जाना कि जिसने आत्मा ज्ञायकस्वरूप है, उस पर दृष्टि लगाकर आत्मा का अनुभव किया तो पर्याय में, अवस्था में ज्ञान की इतनी शक्ति प्रगट हुई कि सारे अनन्त पदार्थों को ग्रसित कर डालती है, जान लेती है - ऐसी शक्ति है। आहाहा! यह शरीर, वाणी, मन, आदि परपदार्थ, आहाहा! देव-गुरु-शास्त्र भी परपदार्थ, लोकालोक, अपनी ज्ञान की पर्याय के अतिरिक्त जितनी चीज है, वह सब उसको तो ज्ञेय (जाना)। यहाँ ज्ञेय को ज्ञान करने की शक्ति है। यह ज्ञेय मेरा है - ऐसा उसमें है नहीं। आहाहा! अरे! देव-गुरु और शास्त्र भी मेरे हैं - ऐसा ज्ञान की पर्याय में है नहीं। आहाहा! वह तो भगवान आत्मा अनन्त... अनन्त... अनन्त... अनन्त ज्ञान का सागर प्रभु, वह जब अपने स्वरूप का- आत्मा का अनुभव हुआ तो पर्याय में ज्ञानदशा ऐसी प्रगट हुई, इसको आत्मा की उस पर्याय में समस्त पदार्थ को जानने की, ग्रसित करने की, ग्रास करने की शक्ति है। आहाहा!

बहुत सूक्ष्म बात, भाई! जगत को निवृत्ति नहीं और यह पूरा तत्त्व निवृत्तिमय तत्त्व है। आहाहा! **...किये जाने से, मानो अत्यन्त अन्तर्मग्न हो रहे हों....** क्या कहते हैं? यह छद्मस्थ के ज्ञान की पर्याय-सम्यग्दृष्टि की ज्ञान की पर्याय... आहाहा! धर्मी सम्यग्दृष्टि हुआ, चैतन्यस्वरूप पूर्णानन्द मैं हूँ - ऐसा भान होकर पर्याय में जो सम्यग्ज्ञान हुआ, उसकी ऐसी ताकत है कि अत्यन्त अन्तर्मग्न हुआ, मानो सब पदार्थ अन्दर घुस गये हों। अन्तर्मग्न हो रहा। अपनी पर्याय में, ऐसा जानने में आया कि मानो वह चीज अपनी में आ गयी हो। वह चीज आती नहीं परन्तु उस चीज सम्बन्धी अपना ज्ञान अपने में हुआ, उसमें जानने में आता है। अरे! ऐसी कठिन बातें हैं।

अत्यन्त अन्तर्मग्न हो रहे हों.... देखो भाषा! **मानो अत्यन्त अन्तर्मग्न...** (हो रहे हैं)। भगवान ज्ञानस्वरूप... जैसे दर्पण में सामने चीज हो तो उसका प्रतिबिम्ब पड़ता है न? वह प्रतिबिम्ब उस चीज का, चीज नहीं; वह तो दर्पण की स्वच्छता है, वह स्वच्छता है परन्तु उस स्वच्छता में मानो परचीज प्रविष्ट हो गयी हो - ऐसा दिखता है। वैसे भगवान आत्मा... आहाहा! एक ओर राम और एक ओर गाँव। एक ओर भगवान आत्मा का

सम्यग्ज्ञान जहाँ हुआ तो उस पर्याय में सारा लोकालोक-अनन्त केवली और अनन्त सिद्ध जिसमें अन्तर्मग्न हैं, उनका ज्ञान हो गया, अन्तर्मग्न हो गये हों - ऐसे दिखते हैं, कहते हैं। धीरजवान का काम है, भाई! आहाहा!

यह चैतन्यलोक, जिसमें अनन्त-अनन्त गुणशक्ति पड़ी है, उसमें से एक ज्ञान, इस ज्ञायक का ज्ञान-स्वरूप का ज्ञान, ऐसा पर्याय में प्रगट हुआ कि जिसमें लोकालोक-अन्य पदार्थ मानो निमग्न हो गये हों, उसका ज्ञान हुआ है, वह मानो निमग्न हुए हों। आहाहा! **ज्ञान में तदाकार होकर डूब रहे हों,....** आहाहा! जैसे दर्पण में सामने अग्नि और सर्प हो तथा दिखते हैं, वे मानो अन्दर वह चीज अन्दर है - ऐसा लगता है। है नहीं, है तो वह दर्पण की स्वच्छता; वैसे ही भगवान आत्मा अपने ज्ञान की सम्यक् पर्याय की स्वच्छता में लोकालोक-अनन्त द्रव्य मानो कि अन्तर्मग्न हो गये हों; उनका ज्ञान हुआ तो मानो अन्तर्मग्न हुए - ऐसी बात है।

यह ज्ञान की सम्यक्पर्याय स्व को जाने, गुण को जाने, लोकालोक को जाने, अनन्त पर्याय को जाने, मानो एक समय की पर्याय ही सर्वस्व है। आहाहा! समझ में आया? वह एक समय की ज्ञान की सम्यक्पर्याय मानो वह सर्वस्व हो। लोकालोक को जाने, द्रव्य को जाने, गुण को जाने, अनन्त पर्याय (को जाने)। आहाहा! एक समय की पर्याय में... उसके उपयोग में लोकालोक मानो अन्तर्मग्न हो गया हो, मानो ग्रास हो गया हो, ग्रासीभूत कर लिया। आहाहा! बाकी भी बहुत रहा। यह सबको जाना परन्तु ग्रास में ग्रास छोटा और मुँह बड़ा; वैसे ही ज्ञान की पर्याय की इतनी ताकत की लोकालोक मानो वह तो कवल-ग्रास हो गया।

श्रोता : कितने लोकालोक....

पूज्य गुरुदेवश्री : इससे अनन्तगुना हो तो भी जान सके - ऐसी ताकत है। ग्रास कहा न? आहाहा!

प्रभु! तेरे द्रव्य-गुण की तो क्या बात करना! आहाहा! भगवान ज्ञायकस्वभाव, यह उसके गुण ज्ञान आदि, उनकी तो क्या बात करना, प्रभु! आहाहा! परन्तु उसका ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में इतनी ताकत है कि सारा आत्मा तो जानने में आया, परन्तु वह पर्याय,

भिन्न जो पदार्थ अनन्त हैं, आहाहा! अनन्त सिद्ध, अनन्त निगोद के जीव, जिनकी संख्या का पार नहीं, आहाहा! वह संख्या और उनके गुण की संख्या का पार नहीं, यह सब ज्ञान के एक समय के उपयोग में... आहाहा! यह सब जानने में आ गया, ग्रास हो गया। मानो लोकालोक ज्ञान में अन्तर्मग्न हो गया - ऐसी बात है। सम्यग्दृष्टि का ज्ञान, स्वरूप की प्रतीति अखण्डानन्द प्रभु के समक्ष ये सब पदार्थ तुच्छ हैं। ये सब पदार्थ अपने ज्ञान की पर्याय में ऐसे जानने में आते हैं, मानो कि ग्रासीभूत हो गये हों, मानो सब अन्तर्मग्न हो गये हों, आहाहा! और मैं यही एक हूँ। आहाहा! 'अहं एको' है न? आगे आयेगा, अन्तिम ३८ वीं गाथा में आयेगा न? आहाहा!

ज्ञान में तदाकार होकर डूब रहे हों, इस प्रकार आत्मा में प्रकाशमान.... देखो, वहाँ चितशक्ति कही थी न, परन्तु वह यहाँ प्रकाशमान पर्याय ले लेना। आत्मा में प्रकाशमान **यह धर्मास्ति,** धर्मास्तिकाय है न। चौदह ब्रह्माण्ड में एक धर्मास्ति द्रव्य / तत्त्व है कि जड़ चेतन गति करें तो उसमें निमित्त कहने में आता है। वह धर्मास्तिकाय यहाँ घुस गया - यहाँ उसका ज्ञान आ गया। ज्ञेय है न! तो अपने ज्ञान की पर्याय में धर्मास्तिकाय का ज्ञान हो गया। आहाहा! समझ में आया? धर्मास्ति नाम का पदार्थ है तो यहाँ आत्मा ज्ञायकस्वरूप का जहाँ ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में धर्मास्तिकाय ज्ञेय है, उसका ज्ञान हुआ तो धर्मास्तिकाय पदार्थ मानो अन्दर आ गया, अन्तर्मग्न हो गया, उसका ज्ञान है। आहाहा! आहाहा! और उस धर्मास्तिकाय में भी अनन्त गुण, आहाहा! अनन्त-अनन्त गुण, अनन्त-अनन्त गुण, वह सब मानो ज्ञान की पर्याय में ज्ञेय होकर आ गया। आहाहा!

वैसे ही अधर्मास्ति, **अधर्म** एक द्रव्य है। जड़ और चेतन गति करते हुए स्थिर रहें तो स्थिर में निमित्त एक अधर्मास्तिकाय नामक एक तत्त्व है। वह तत्त्व भी सम्यक्ज्ञायक स्वभाव का ज्ञान हुआ तो उस ज्ञायक पर्याय में अधर्म तत्त्व मानो अन्दर घुस गया हो, उसका ज्ञान हुआ। ज्ञायक और ज्ञेय के सम्बन्ध में ज्ञेय का ज्ञान हुआ। आहाहा! ऐसी बातें हैं। आहाहा!

आकाश... ओहोहो! आकाश जिसका अन्त नहीं और जिसके गुण का भी अन्त नहीं, आहाहा! ऐसा आकाश नाम का द्रव्य (है)। ज्ञायकस्वभाव का ज्ञान होने में, उस

पर्याय में उस आकाश का ज्ञान हो गया। आहाहा! समझ में आया? आहाहा! एक आकाश में अनन्त... अनन्त... अनन्त... अनन्त... प्रदेश, जिसका अन्त नहीं और एक आकाश में अनन्त गुण, जिसका अन्त नहीं, वह आकाश नाम का पदार्थ। आहाहा! भगवान ज्ञायकस्वभाव का ज्ञान हुआ, उसमें इस आकाश का ज्ञान हो गया क्योंकि पर्याय का स्वभाव अपने से स्व-पर प्रकाशक है। वह पर का प्रकाशक अपने से है। वह पर है तो जाना - ऐसा भी नहीं। आहाहा!

अपना ज्ञायक भगवान चैतन्यस्वरूप प्रभु अकेला चैतन्य लोक! आहाहा! उसका जहाँ लोकान्त ज्ञान हुआ तो उस ज्ञान में इतनी ताकत है कि आकाश के प्रदेश का-क्षेत्र का अन्त नहीं, गुण का (अन्त) नहीं, उसका भी ज्ञान हो गया। आहाहा! यह तो अभी मति-श्रुतज्ञान की पर्याय की बात चलती है। आहाहा!

श्रोता : मति-श्रुत में तो परोक्ष ज्ञान होता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : परोक्ष भले हो परन्तु जानने की शक्ति उसमें अपने से हो गयी है। परोक्ष और प्रत्यक्ष में इतना अन्तर है परन्तु है ठीक जैसा केवली जानते हैं, वैसा ही श्रुतज्ञानी जानते हैं। आहाहा!

जिसके द्रव्य-गुण का-शक्तियों का तो पार नहीं, भगवान आत्मा। जिसका ज्ञान हुआ, वह ज्ञेय... ज्ञेय... ज्ञेय बनाकर - स्व को ज्ञेय बनाकर सम्यक् ज्ञान हुआ, उसमें पर ज्ञेय का ज्ञान ऐसा आ गया मानो, अन्तर्मग्न हो गया हो। आहाहा! ऐसा मार्ग है। आकाश आया न?

काल असंख्य कालाणु हैं। एक-एक कालाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। वे असंख्य कालाणु संख्या से असंख्य हैं परन्तु उनके गुण की संख्या अपार है। ऐसे काल पदार्थ का भी... ओहोहो! प्रभु! तेरी ज्ञानपर्याय, स्व के जानने में आया तो स्व-पर प्रकाशक पर्याय हुई, उसमें काल का ज्ञान आ गया।

श्रोता : काल तो उपचारिक द्रव्य है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वास्तविक, ज्ञान है, काल है। वह उपचारिक श्वेताम्बर कहते हैं, झूठ है। आहाहा! काल नामक पदार्थ असंख्य, नित्यानित्य है। पर्याय से अनित्य है, वस्तु से काल नित्य है। उस काल में अनन्त-अनन्त गुण हैं। जितने गुण भगवान आत्मा

में है, जितने आकाश में है, उतने ही गुण एक कालाणु में हैं। अरे! आहाहा! यह असंख्य कालाणु, अपने स्वरूप का ज्ञान हुआ, स्व-परप्रकाशक पर्याय में स्व को जानता है, तब तो पर प्रकाशक का ज्ञान यथार्थ हुआ। आहाहा!

पुद्गल.... आत्मा की अनन्त संख्या से पुद्गल परमाणु अनन्तगुने हैं। वे अनन्तगुने परमाणु और एक-एक परमाणु में, आत्मा में जितने गुण हैं उतने गुण, इसमें-जड़ में हैं- एक-एक परमाणु (में है)। ऐसे अनन्त परमाणु जो आत्मा की संख्या अनन्त से अनन्तगुने हैं, ऐसे पुद्गल का ज्ञान की पर्याय हो, प्रभु! तुझे तेरी शक्ति का जहाँ ज्ञान हुआ, इस ज्ञायक का ज्ञान हुआ, स्वद्रव्य का ज्ञान हुआ तो इस पर्याय में ऐसे अनन्त-अनन्त पुद्गल के परमाणु और उस परमाणु में अनन्त गुण, सबका ज्ञान हो गया। कठिन बात है प्रभु! आहाहा! तेरे द्रव्य-गुण की तो क्या कहना। परन्तु उस द्रव्य-गुण का ज्ञान हुआ, उस पर्याय में इतनी ताकत है, मानो कि वह पर्याय एक ही वस्तु हो, बस! इसमें स्वभाव का ज्ञान आ गया - ऐसा सम्यक्ज्ञान, स्वज्ञायक का ज्ञान होने से पर का-ज्ञेय का ज्ञान अन्दर आ गया। आहाहा! समझ में आया? (ऐसी) बातें, बापू!

भगवन्त! यह तेरी बातें अलग हैं, भाई! आहाहा! यह बाहर की चीजें, चमक लगे वह तो सब जड़ है-धूल है। वे सब पदार्थ जड़ हैं, उनका यहाँ ज्ञान आ गया - ऐसा कहते हैं। आहाहा!

श्रोता : उनका ज्ञान या उन सम्बन्धी अपना ज्ञान?

पूज्य गुरुदेवश्री : उन सम्बन्धी का अपना ज्ञान अपने में आ गया, उन सबका, आहाहा! इसलिए कहा कि मानो वे सब पदार्थ यहाँ घुस गये हों। पदार्थ आये नहीं परन्तु पदार्थ सम्बन्धी अपना जो ज्ञान है, उसमें जानने में आ गये। अरे! अब ऐसी बातें!

भावेन्द्रिय तो खण्ड-खण्ड ज्ञान, वह अज्ञान है। आहाहा! उसमें-उस ज्ञान में स्व को जानने की ताकत नहीं। खण्ड-खण्ड ज्ञान में मात्र पर जाना। आहाहा! वह खण्ड-खण्ड ज्ञान परवश है, दुःखरूप है... आहाहा! और भगवान आत्मा ज्ञायक का ज्ञान पूर्ण है, स्ववश है, सुखरूप है, आहाहा!

चैतन्य ज्ञायकस्वभाव भगवान आत्मा का ज्ञान होने से, उस द्रव्यस्वभाव का ज्ञान

होने से उस ज्ञान की पर्याय में.... आहाहा! अनन्त... अनन्त... अनन्त... शरीर, अनन्त निगोद के जीव, और एक-एक निगोद को दो-दो शरीर-तैजस और कार्माण, अंगुल के असंख्य भाग में अनन्त आत्मायें, एक-एक आत्मा में तैजस-कार्माण शरीर, एक-एक कार्माण शरीर में अनन्त स्कन्ध, एक-एक स्कन्ध में अनन्त परमाणु और एक-एक परमाणु में अनन्तगुने गुण। आहाहा! इन सर्वज्ञ के अतिरिक्त यह कौन कहे? और यह (जानना) तेरा स्वभाव है - ऐसा कहते हैं। आहाहा!

भगवान! तू ज्ञाता-दृष्टा है न? तेरी चीज तो ज्ञाता-दृष्टा प्रभु है न? उस ज्ञाता-दृष्टा का ज्ञान हुआ। आहाहा! स्व स्वरूप का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में जितने परज्ञेय और गुण हैं, सबका ज्ञान आ जाता है। आहाहा! बहुत सूक्ष्म गाथा है, बापू! आहाहा! वस्तुस्थिति यह है। आहाहा!

इस परमाणु के तो अनन्त लड्डू, अनन्त मैसूबपाक, आहाहा! अनन्त रसगुल्ला आदि परमाणु के पिण्ड हैं। आहाहा! यह अनन्त रजकण का पिण्ड शरीर है, अनन्त रजकण का पिण्ड कार्माण और तैजस शरीर है, एक-एक रुपये और पाई में अनन्त परमाणु हैं, नोट अनन्त परमाणु का स्कन्ध है। इसमें अनन्त परमाणु हैं, एक-एक परमाणु में अनन्त गुण हैं। इन सब पुद्गल का ज्ञान, आहाहा! भगवान आत्मा का ज्ञान होने से स्व-लक्ष्य में से ज्ञान आया। आहाहा! तो इस ज्ञान की पर्याय में अनन्त स्कन्ध, यह शरीरादिक का ज्ञान (सभी का) ज्ञान हो जाता है। मेरा है - ऐसा उसमें है नहीं। आहाहा! ऐसा है प्रभु!

तेरे द्रव्य का तो क्या कहना! गुण का तो क्या कहना! परन्तु उसकी एक ज्ञान की एक पर्याय की बात ऐसी है। आहाहा! भले उपयोग असंख्य समय में लागू पड़ता है परन्तु उसकी एक पर्याय में ही यह सब होता है। आहाहा! ऐसा ज्ञान हो, वहाँ आनन्द साथ होता है। आहाहा! यह ज्ञान होने पर स्व-वशता होती है। यह ज्ञान होने पर, निरालम्बी परिणति प्रगट होने पर... आहाहा! अनन्त-अनन्त परमाणु, पूरा लोक परमाणु से ठसाठस भरा है। यहाँ अंगुल के असंख्य भाग में अनन्त स्कन्ध हैं; एक-एक स्कन्ध में अनन्त परमाणु हैं; एक-एक परमाणु में अनन्त गुण हैं; अनन्त गुण की अनन्त पर्याय है। आहाहा! इन सबका ज्ञान, प्रभु! तेरा ज्ञान होने से (होता है)। कितनी ताकत है, देख तो सही! पर का ज्ञान तो अनन्त

बार किया, कहते हैं। आहाहा! वह वास्तविक ज्ञान ही नहीं। आहाहा! समझ में आया?

पुद्गल... पुद्गल में क्या बाकी रहा? यह फर्नीचर, मकान, महल, और अनन्त-अनन्त पैसे और रुपये, वह तो ज्ञान की पर्याय प्रगट हुई, उसमें जानने में आ गया, बस! आहाहा!

श्रोता : ज्ञान न हो, तब तक मालिकी का प्रश्न नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : मालिक धूल भी नहीं। मालिक... मालिक मानता है, अज्ञानी मूढ़ है। परज्ञेय का मालिक हूँ - ऐसा माननेवाला मूढ़ है। आहाहा! स्वज्ञेय का मालिक हुआ, अपनी चैतन्यज्योति ज्ञान का परिपूर्ण भण्डार, ऐसे तो अनन्त गुण प्रभु में (आत्मा में हैं)। ऐसे ज्ञायक चैतन्य के आश्रय से... आहाहा! उसके लक्ष्य से जो ज्ञानदशा हुई... हुई, उस ज्ञान में अनन्त पुद्गलों को स्पर्श किये बिना, छुये बिना, आहाहा! उन अनन्त पुद्गलों में वर्तमान ज्ञान की पर्याय प्रवेश किये बिना (जान लेती है)।

वह भावसार याद आया। अरे भगवान! वेदान्ती, (संवत्) ८४ में राणपुर में पूछा था। अरे भगवान! ऐसा नहीं। कहा, भाई! अनन्त को एक मानना है न, इसलिए फिर ज्ञान प्रवेश करे, तब एक हो जाता है। अरे...! ऐसा नहीं, भाई! वेदान्त ने पर्याय नहीं मानी है। निश्चयाभासी मिथ्यादृष्टि है। भले वह आत्मा की बातें करे। आहाहा!

यहाँ तो भगवान ज्ञायक का पिण्ड प्रभु, उसके स्व-लक्ष्य से जो ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में इतनी ताकत है कि अनन्त... अनन्त... अनन्त... अनन्त... अनन्त... द्रव्य और एक-एक द्रव्य में अनन्त... अनन्त... अनन्त... अनन्त - अन्त न आवे इतने गुण, उन्हें उनमें प्रवेश किये बिना, उन्हें छूए बिना अथवा उनका अस्तित्व है, इसलिए यहाँ ज्ञान होता है - ऐसा भी नहीं। आहाहा! ज्ञान की एक समय की पर्याय ही इतनी ताकतवाली है। अपनी पर्याय का अस्तित्व इतना है। आहाहा! अरे! ऐसे तत्त्व की बात छोड़कर बाहर में व्रत किये और उपवास किये और अज्ञानी ने उनमें धर्म माना। भटककर मरेगा। आहाहा!

यह अनन्त पुद्गल परावर्तन किये, उनका भी पर्याय में ज्ञान होता है, कहते हैं - ऐसा कहते हैं। आहाहा! अनन्त पुद्गल में है न? अनन्त पुद्गल परावर्तन किये। आहाहा! उसका यहाँ, अनन्त पुद्गल परावर्तन का जिसमें अभाव है, जिसमें राग का और शरीर का

अभाव है, जिसमें एक समय की पर्याय का भी अभाव है - ऐसे द्रव्य का ज्ञान और श्रद्धा होने पर... आहाहा! उस पर्याय में, अनन्त पुद्गल परावर्तन किये, उसका ज्ञान होता है। आहाहा! ऐसी बातें हैं।

यह कहेंगे - अन्तरंग तत्त्व तो मैं यह हूँ। आहाहा! सूक्ष्म पड़े, प्रभु! परन्तु सत्य तो यह है। आहाहा! **अन्य जीव....** अब अनन्त सिद्ध, आहाहा! अरिहन्त, आचार्य, उपाध्याय, साधु; जो केवली हैं अनन्त सिद्ध, लाखों केवली हैं, ये सब जीव अन्य (हैं)। उनका स्वज्ञेय का ज्ञान होने पर, भगवान आत्मा स्व-पर प्रकाशक का पिण्ड प्रभु का ज्ञान होने पर उस ज्ञान की पर्याय में अनन्त पंच परमेष्ठी.... आहाहा! णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती अरिहंताणं - ये तीनों काल के अरिहन्त, आहाहा! तीनों काल के सिद्ध, तीनों काल के आचार्य, उपाध्याय, साधु, और इससे अनन्तगुने दूसरे-निगोद के जीव... आहाहा! यह सब अन्य जीव इस ज्ञान की पर्याय में ज्ञात होते हैं, कहते हैं। आहाहा! यह भूत और भविष्य के काल में हो गये और होंगे - तीर्थंकर! आहाहा! इस चैतन्य के महाप्रभु का ज्ञान होने पर इन तीन काल के अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, आहाहा! काल आ गया न? इसलिए काल में रहे हुए भी सब आ गये। इस ज्ञान की पर्याय में उनका ज्ञान होता है।

अनन्त तीर्थंकर, सन्त-मुनि होंगे; अनन्त हो गये और अनन्त सिद्धरूप में हैं, बाकी सब संख्यात है। उनका ज्ञान, भगवान! तेरी ज्ञान की पर्याय स्व के जानने में इतनी ताकत है कि इन सबको एक समय में जान लेती है। आहाहा! अब ऐसी बातें! समझ में आया? यह क्या होगा और धर्म में ऐसी बात होगी? भगवान! तेरा धर्म ज्ञानस्वभाव और उस ज्ञानस्वभावी भगवान का ज्ञान होने पर... आहाहा! उस ज्ञान की पर्याय में अनन्त जीव जो अन्य-स्वजीव से अन्य (है), उनका ज्ञान एक समय की पर्याय में आ जाता है। समझ में आया? आहाहा!

अन्य जीव.... अब इसमें देव-गुरु भी आये, अरहन्त-सिद्ध भी आये; इनसे आत्मा को लाभ हो, यह बात नहीं रहती - ऐसा कहते हैं। आहाहा! यह तो आ गया था, नहीं? स्वयमेव — पर की अपेक्षा बिना, स्वयमेव ज्ञान स्वयं से होता है। आहाहा! उपदेश बिना! उपदेश मिला, इसलिए होता है - ऐसा नहीं। आया था? आहाहा! जिसे स्वज्ञान होने

में उपदेश की भी अपेक्षा नहीं। आहाहा! तथापि देशनालब्धि होती है परन्तु वह होने पर भी, स्व के ज्ञान होने में उसकी अपेक्षा नहीं है। आहाहा! ऐसा स्वरूप है।

अरे! तू कितना बड़ा? तेरी पर्याय की महिमा का तो पार नहीं, प्रभु! द्रव्य-गुण की तो क्या बात करना! वह तो महाप्रभु आनन्द का भण्डार, ज्ञान का भण्डार, श्रद्धा का भण्डार, ईश्वरता का भण्डार, अनन्त-अनन्त शक्ति का भण्डार प्रभु; ऐसी अनन्त शक्ति के भण्डारवाला तत्त्व का ज्ञान होने पर... आहाहा! भावेन्द्रिय से ग्यारह अंग का ज्ञान हुआ, वह अज्ञान और स्व-ज्ञायक के आश्रय से जो ज्ञान हुआ, वह अनन्त जीवों को जाने ऐसा ज्ञान, आहाहा! कान में पड़ना भी मुश्किल पड़े ऐसी (बात) है, बापू! तेरी महिमा की क्या बात करना! तुझे यह बात जमती नहीं, पामररूप से माना है न! आहाहा!

यहाँ तो भगवान आत्मा ज्ञायकस्वरूपी प्रभु, अकेला ज्ञायकस्वभाव ध्रुव चैतन्य का ज्ञान होने से... पर की बात यहाँ नहीं है। यहाँ तो स्व का ज्ञान होने से उस पर्याय में पर का ज्ञान सहज हो जाता है। सूक्ष्म बात है, भाई! जीव अधिकार है न! जीव अधिकार की ज्ञान की पर्याय का अधिकार, धर्म समझा, सम्यग्दर्शन पाया... भगवान पूर्णानन्द के नाथ को प्रतीति में लिया। आहाहा! पूर्णानन्द के नाथ का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय की यह बात चलती है। आहाहा! मानो कि अनन्त जीव-सिद्ध हैं, मानो उन्हें ग्रासीभूत कर गया, प्रभु! आहाहा! ऐसे ज्ञान की पर्याय, वह स्व के ज्ञान के लक्ष्य से वस्तु के तत्त्व में जिसमें ज्ञायकपना भरा है, आहाहा! उसके आश्रय से-लक्ष्य से जो ज्ञान सम्यक् हो, उस पर्याय में अनन्त सिद्ध ज्ञात हो जाते हैं। आहाहा! उन्हें जानने के लिये अलग उपयोग देना नहीं पड़ता। स्व को जानने का उपयोग हुआ, उसमें उन्हें जानने के लिये अलग उपयोग नहीं रखना पड़ता। आहाहा! देखो, यह भगवान आत्मा के ज्ञान की पर्याय! इसे सम्यग्ज्ञान कहते हैं। आहाहा!

भाई! मार्ग तो अलौकिक है, आहाहा! तेरी चीज ही अलौकिक है, लोकोत्तर... लोकोत्तर! आहाहा! अनन्त जीव आये। **ये समस्त परद्रव्य....** यह समस्त परद्रव्य - अरिहन्त परद्रव्य, सिद्ध परद्रव्य, साधु-आचार्य परद्रव्य, यह मेरी चीज नहीं है। आहाहा! आहाहा! तो फिर यह लड़के लड़कियाँ, स्त्री-पुत्र मेरे... मूढ़ है, बड़ा मूर्ख है।

श्रोता : अन्य जीव में सब आ गये।

पूज्य गुरुदेवश्री : सब आ गये। आहाहा!

श्रोता : कौन बाकी रहा?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह स्त्री का आत्मा, पुत्र का आत्मा... इस स्व का ज्ञान होने पर उस ज्ञान में उनका ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में वे ज्ञात हो गये, वे अपनी पर्याय में से ज्ञात हो गये, उनके कारण नहीं। आहाहा! ऐसा है। आहाहा!

श्रोता : ऐसा जाननेयोग्य है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह वस्तु है, बापू! दुनिया कहीं भटककर पड़ी है। एक तो संसार के पाप पूरे दिन - स्त्री-पुत्र, धन्धा, पाप, पाप और पाप। अब उसमें एक घण्टा मिले और सुनने जाये, वहाँ तत्त्व की बातें नहीं मिलें और विपरीत बातें... आहाहा! अपवास करो, भगवान के दर्शन करो, मूर्ति बनाओ, मूर्ति एक इतनी भी स्थापित करे तो उसके पुण्य का पार नहीं... परन्तु उससे क्या हुआ? यह धर्म कहाँ आया उसमें? आहाहा! इस जगत की मूर्तियाँ जो अनन्त मन्दिर... अरे! चैतन्य की शाश्वत् प्रतिमा, उनका यहाँ ज्ञान, स्व का ज्ञान होने पर उस पर्याय में उनका ज्ञान आ जाता है। आहाहा! वह उनका अर्थात्? उन सम्बन्धी का अपना ज्ञान इसमें वह ज्ञात हो जाता है। अरे! अब ऐसी बातें। समझ में आया? सूक्ष्म है इसमें। शान्तिभाई! वहाँ कलकत्ता में कहीं मिले ऐसा नहीं है। वहाँ भटकने का है, वहाँ सब। पैसा मिले तो मानो, ओहोहो! उसमें पाँच-पच्चीस लाख...

श्रोता : यह पैसा जिसे मिले उसे....

पूज्य गुरुदेवश्री : धूल भी पैसा मिला नहीं इसे। इसके पास कहाँ आये? यहाँ तो पैसे का... सम्यक्ज्ञान होने पर पैसे का ज्ञान यहाँ होता है। पैसे मिले - ऐसी मान्यता मिथ्यादृष्टि, पाखण्डी की-अज्ञानी की है। आहाहा!

श्रोता : ज्ञान न हो, तब तक तो मिले कहलाये न?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह मूरख मानता है।

ज्ञानी जहाँ आत्मस्वरूप से भगवान ज्ञानलोक, उसे लोकान्ते देखा, प्रभु को, आहाहा! और जो ज्ञान पर्याय प्रगट हुई, उसमें वे अनन्त परमाणु नोट और पैसे, हीरे-माणिक, उनका यहाँ ज्ञान होता है। वह पर है, उनका यहाँ ज्ञान स्वयं से होता है। आहाहा!

श्रोता : उनमें से कितने ही हमारे पास आते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : धूल भी नहीं आते इसके पास। कौन इसके पास, कहाँ आते हैं ? इसके पास तो मुझे पैसे मिले – ऐसी ममता इसके पास आयी। धूल कहाँ आयी ? धूल तो धूल है, वह कहाँ आत्मा में आती है ? आहाहा ! ऐसी बातें हैं, प्रभु ! वीतरागमार्ग, सर्वज्ञ तीन लोक के नाथ जिनेश्वरदेव का पंथ कोई अलग प्रकार का है। आहाहा ! दुनिया के साथ कहीं मेल खाये – ऐसा नहीं है। अभी तो सम्प्रदाय के साथ मेल खाये – ऐसा नहीं है। आहाहा ! कठिन बात है प्रभु ! दूसरे को दुःख लगे उसके लिए यह बात नहीं है, भाई ! तेरा सुधार इस प्रकार माना है, उस प्रकार नहीं सुधर सकता। भाई ! व्रत पाले हैं और शास्त्र का ज्ञान किया है और यह व्रत पाले, वह चारित्र। आहाहा ! और हम आत्मा की-खण्ड-खण्ड ज्ञान की श्रद्धा करते हैं... अखण्ड ज्ञान है, उसका तो कहाँ पता है ? खण्ड-खण्ड ज्ञान की श्रद्धा है वह मिथ्यात्व है, भाई ! वह मिथ्यात्व है, वह अज्ञान है, वह मिथ्या आचरण है, उसे तुझे धर्म मनवाना है ? और दूसरे को उस प्रकार धर्म मनवाना है ? प्रभु ! बहुत उत्तरदायित्व कठिन है, नाथ ! आहाहा ! यह कठिन दुःख नहीं सहे जायेंगे, भाई ! आहाहा !

यहाँ तो प्रभु कुन्दकुन्दाचार्य, त्रिलोकनाथ सर्वज्ञदेव की वाणी... उसे प्रवचन, स्वयं की वाणी द्वारा बात करते हैं। आहाहा ! वह ऐसा कहते हैं कि यह वाणी मेरी नहीं। वाणी का मेरी पर्याय में, मेरा ज्ञान हुआ वहाँ वाणी का ज्ञान हुआ, बस इतना ! आहाहा ! अरे ! राग आया तो राग मेरा नहीं, परन्तु राग का ज्ञान भी राग है तो हुआ है – ऐसा नहीं है। मेरी ज्ञान की पर्याय की ताकत इतनी है कि स्व को जाननेवाला ज्ञान, राग आदि अनन्त-अनन्त पदार्थों को जाने, वह मैं हूँ। आहाहा ! आहाहा ! दया, दान का विकल्प वह राग है, वह भी मेरा नहीं और मेरी ज्ञान की पर्याय में उसका ज्ञान, वह है तो होता है – ऐसा भी नहीं। आहाहा !

भगवान आत्मा ज्ञायक चैतन्य ज्योति, जलहल ज्योति प्रभु को ज्ञान ज्ञेय बनाकर जहाँ हुआ तो स्व-पर्याय में परज्ञेय तो सहज जानने में आता है – ऐसा पर्याय का स्वभाव है। आहाहा ! उस परद्रव्य के समीप जाना नहीं (पड़ता), पर का ज्ञान अरिहन्त अनन्त, सिद्ध हुए उनका ज्ञान उनके पास गये बिना और वे ज्ञेय यहाँ आये बिना... नजदीक ज्ञेय है, तो ज्ञान होता है और दूर ज्ञेय है तो नहीं होता है – ऐसा है नहीं। यहाँ तो नजदीक हों,

कर्म के रजकण और दूर हों अनन्त आकाश के प्रदेश, आहाहा! और एक-एक प्रदेश में अनन्त गुण का अंश है। आहाहा! अनन्त-अनन्त प्रदेश में सारे अनन्त गुण हैं - आकाश, उसके भी इस स्वभगवान आत्मा स्व का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान की पर्याय में वह परज्ञेय जानने में आ जाता है, बस! आहाहा! ऐसा है।

तीन लोक के नाथ तीर्थंकरदेव जैन परमेश्वर ऐसा फरमाते हैं। समझ में आया?

श्रोता : जैन परमेश्वर है, दूसरे अजैन परमेश्वर है।

पूज्य गुरुदेवश्री : अजैन, दूसरे लोग मानते हैं। हम परमेश्वर हैं और हम... आहाहा! ब्रह्मा, विष्णु और महेश? हम कर्ता हैं। धूल भी नहीं। आहाहा! स्वयं ही भगवान आत्मा ब्रह्मा, विष्णु और महेश (है) आहाहा! जिसकी पर्याय की उत्पत्ति, वह ब्रह्मा; व्यय-नाश (पर्याय का), वह शंकर; ध्रुव रहा, वह विष्णु - ऐसा जो यह चैतन्य भगवान, जिसने तीन काल और तीन लोक को एक समय में ग्रासीभूत कर जाये, ऐसी पर्याय की ताकत है, भगवान की (आत्मा की)। आहाहा! उसने आत्मा जाना कहलाता है। आहाहा! उसे सम्यग्दृष्टि और सम्यग्ज्ञानी कहा जाता है, प्रभु! ऐसी बातें हैं, भाई! आहाहा! हंसमुखभाई नहीं आये न? नहीं आये। कल आये थे, उन्हें रस है परन्तु भावनगर रह जाते हैं न? आहाहा!

परद्रव्य मेरे सम्बन्धी नहीं हैं;... है? उन सिद्धों को और मुझे कोई सम्बन्ध नहीं है, कहते हैं। आहाहा! अरिहन्त भगवान हुए, उन्हें और मुझे कोई सम्बन्ध नहीं है, वे तो परद्रव्य हैं। गुरु को और मुझे कोई सम्बन्ध नहीं है, वे तो परद्रव्य हैं। आहाहा! कठिन बात है, भाई!

वीतराग परमेश्वर जिनेश्वर का ज्ञान, उन द्वारा कहा गया मार्ग कोई अलौकिक है, भाई! अरे! इसे जाने बिना चौरासी का अवतार कर रहा है। आहाहा! देखो न! इस शरीर में वाय हो, आहाहा! आहाहा! जड़, जड़ है यह तो। रोग है वह जड़ है। इस आत्मा को एक बार इस पर दृष्टि होती है न, हिला डाले। आहाहा! अरेरे! मुझे यह हुआ, अरेरे! मुझे यह हुआ... परन्तु बापू! मुझे अर्थात् क्या? तू तो आत्मा है, उसमें यह हुआ, वह तुझे कहाँ हुआ? तुझे क्या हुआ है? आहाहा! ऐसा उपदेश! प्रभु! तीन लोक के नाथ का-जिनेश्वरदेव

का यह कथन है, भाई! जैन में जन्मे, उन्हें इसका पता नहीं पड़ता। बाड़े में जन्में (मान लेते हैं कि) हम जैन, परन्तु जैनपना क्या है? - इसका पता नहीं। आहाहा!

जैन तो इसको कहते हैं, आहाहा! कि जिनस्वरूपी भगवान आत्मा पूर्ण स्वरूप का लक्ष्य करके, दृष्टि करके जो सम्यग्दर्शन हुआ, उसे जैन कहते हैं। उस जैन की पर्याय में इतनी ताकत है। आहाहा! अनन्त जीव मानो अन्दर प्रविष्ट हो गये हों (तो भी) मेरे नहीं हैं। यहाँ तक तो कल आया था। अब कल बात। (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)